# इकाई 28 राज्य तथा अन्य संस्थाओं की भूमिका

**इकाई की रूपरेखा**


28.0 उद्देश्य

28.1 प्रस्तावना

28.2 संस्था के रूप में राज्य

28.3 राज्य की भूमिका

28.4 ग़ैर-राज्यीय संस्थाएँ

28.4.1 स्वैच्छिक संगठनों के अभिलक्षण

28.4.2 स्वैच्छिक संगठनों और ग़ैर-सरकारी संगठनों में अंतर

28.5 स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका

28.5.1 स्वैच्छिक संगठन और पारिस्थितिकी

28.5.2 अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के विकास के लिए स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका

28.6 स्वैच्छिक संगठनों के सामने आने वाली समस्याएँ

28.7 स्वैच्छिक प्रयासों को बढ़ावा देने के लिए सुझाव

28.8 सारांश

28.9 शब्दावली

28.10 बोध प्रश्नों के उत्तर


## 28.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपके लिए संभव होगा :

- संस्था के रूप में राज्य की संकल्पना के बारे में विचार करना;
- राज्य की भूमिका का वर्णन करना;
- राज्य और ग़ैर-राज्य संगतियों तथा स्वैच्छिक संगठनों और ग़ैर-सरकारी संगठनों के बीच अंतर करना;
- विकास में स्वैच्छिक संगठनों की भूमि की चर्चा करना;
- स्वैच्छिक संगठनों के सामने आने वाली समस्याओं को पहचानना; और
- स्वैच्छिक प्रयासों को बढ़ावा देने के तरीकों के बारे में सुझाव देना।

## 28.1 प्रस्तावना

इस खंड की पहली तीन इकाइयों में हमने भूमि, जल और वन संसाधनों के बारे में बात की थी और उन संसाधनों तक लोगों की पहुँच, उनके नियंत्रण और प्रबंध के बारे में चर्चा की थी। इन तीनों इकाइयों में हमने इन संसाधनों के नियंत्रण और प्रबंध में राज्य और अन्य संस्थाओं (associations) की भूमिका की समीक्षा की थी। इस इकाई में हमने राज्य और अन्य संगतियों

की भूमिका के बारे में और अधिक विस्तार से विचार किया है ताकि पारिस्थितिक असंतुलन से संबंधित समस्याओं के समाधान के लिए उपलब्ध विकल्पों से हमारा परिचय हो सके। (पारिस्थितिकी और पारिस्थितिक असंतुलन की संकल्पना के बारे में जानकारी के लिए आप ई.एस.ओ.-02 के खंड 8 की इकाई 37 पढ़िए।) इस परिप्रेक्ष्य में भारत की सामाजिक समस्याओं के समाधान के लिए हमारे अंदर सजगता पैदा होगी। इकाई 28 इस पाठ्यक्रम (ई.एस.ओ.-16) और खंड 7 (पारिस्थितिकी और संसाधन) दोनों की अंतिम इकाई है इसलिए इसमें सामान्य रूप से पाठ्यक्रम और विशेष रूप से खंड से संबंधित मुद्दों पर चर्चा की गई है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि इस इकाई में सामान्यत: सामाजिक समस्याओं के बारे में और विशेष रूप से पारिस्थितिक समस्याओं के बारे में विचार किया गया है। पारिस्थितिक और सामाजिक-आर्थिक तथा राजनैतिक समस्याओं से मिलकर ही संस्थाओं की अधिकांश गतिविधियों का संदर्भ सामने आता है। राज्य और अन्य संगतियों की इन प्रक्रियाओं में भागीदारी से व्यक्ति और व्यापक समाज के बीच एकता के सूत्र बनते हैं। यह सब कैसे होता है, इसको समझना बड़ा दिलचस्प है। प्रस्तुत इकाई 28 में इस प्रक्रिया को समझाया गया है।

इस इकाई की शुरुआत संक्षिप्त चर्चा से होती है जिसमें राज्य को संस्था के रूप में देखा गया है और इस संदर्भ में राज्य की भूमिका पर विचार किया गया है। इसके बाद हमने अन्य संस्थाओं की अवधारणा की व्याख्या की है। ये संस्थाएँ भी विकास की प्रक्रिया में समान रूप से महत्त्वपूर्ण भूमिकाएँ अदा करती हैं। इसके पश्चात् स्वैच्छिक संगठनों के सामने आने वाली समस्याओं को पहचानने का प्रयास किया गया है तथा स्वैच्छिक प्रयासों को बढ़ावा देने के लिए सुझाव दिए गए हैं।

## 28.2 संस्था के रूप में राज्य

राज्य की भूमिका के बारे में चर्चा करने से पहले यह उचित होगा कि हम यह जान लें कि राज्य से क्या अभिप्राय है? इसकी प्रारंभिक परिभाषा यह हो सकती है कि यह एक संस्था (association) है। अब यह प्रश्न उठता है कि संस्था किसे कहते हैं? इसका उत्तर होगा संस्था का मतलब व्यक्तियों के ऐसे समूह से है जो किसी सामान्य ध्येय के लिए सहयोग करते और संगठित होते हैं। इस दृष्टि से परिवार या राजनैतिक दल या व्यापारिक फर्म की तरह राज्य एक संस्था या संघ है। इस संस्था के सदस्यों के वर्ग खास तरीके से किन्हीं विशिष्ट उद्देश्यों के लिए संगठित होते हैं। दूसरा प्रश्न उठता है कि राज्य एक संस्था या संघ के रूप में किसी संस्थान् (institution) या समाज (society) अथवा समुदाय (community) से किस प्रकार भिन्न है? इस प्रश्न के उत्तर के लिए देखिए कोष्ठक 28.01।

**कोष्ठक 28.01**

राज्य समाज के भीतर अवस्थित होता है। परन्तु राज्य कोई समाज का रूप नहीं है। राज्य व्यवस्था और नियंत्रण की एक प्रणाली है तथा इसके कार्यव्यापार में आता है – मानवीय क्षमताओं व आर्थिक संसाधनों का परिरक्षण और विकास। समाज, दूसरी ओर, एक युक्तिपरक संकल्पना है जहाँ तक कि उसको सामाजिक संबंधों की एक शृंखला के रूप में देखा जाता है। यह कोई ठोस संकल्पना नहीं है और न ही वह किसी ठोस वास्तविकता की ओर इशारा करती है, वह तो सामाजिक संबंधों की ओर संकेत करती है।

संस्था और संस्थान् में भेद स्पष्ट करने के लिए यहाँ यह कहना यथेष्ट होगा कि संस्था ऐसे लोगों के एक समूह की ओर संकेत करती है जो किसी सामान्य लक्ष्य के लिए इच्छा-ऐक्य में संघबद्ध और संगठित होते हैं। संस्थान् शब्द लोगों का संकेत नहीं करता। वह तो उस रूप का संकेत करता है जिससे वे व्यक्ति तथा उनकी गतिविधियाँ जुड़ी होती हैं।

अन्ततः, चलिए संस्था और समुदाय के बीच भेद पर नज़र डालते हैं। व्यक्ति किसी संस्था में रहकर अपने जीवन का केवल एक हिस्सा मात्र गुज़ारता है। परन्तु व्यक्ति का सम्पूर्ण जीवन उसके समुदाय में ही गुज़रता है। राज्य का संगठन बिल्कुल भी सामाजिक संगठन नहीं हैं, हम कह सकते हैं कि राज्य एक आंशिक संगठन है और इस अर्थ में वह एक संस्था है। समुदाय, देश, शहर ग्राम, राष्ट्र जनजाति के रूप में एकीकृत संगठन होते हैं।

राज्य और दूसरी संस्थाओं के बीच केवल एक ही बात समान है कि दोनों में सदस्यों के वर्ग होते हैं जो किसी समान ध्येय के लिए संगठित होते हैं। अपने विशिष्ट अभिलक्षणों के कारण राज्य दूसरी संस्थाओं से भिन्न हैं। यह एक अपने ही ढंग की संस्था है। अन्य संस्थाओं या ग़ैर-राज्य संस्थाओं में राज्य के समान विशिष्ट अभिलक्षण नहीं पाए जाते हैं। राज्य के विशिष्ट अभिलक्षण उसे अपने ढंग की एक विशिष्ट संस्था बना देते हैं जो अपने आप में ही एक प्रकार (type) की संस्था है। अन्य अथवा ग़ैर-राज्यीय संघ राज्य के साथ उन विशेष अभिलक्षणों में भागीदारी नहीं निभाते जो उसे एक स्वयं एक श्रेणी बना लेते हैं।

राज्य के ये अभिलक्षण नीचे दिए गए हैं :

i) इसकी एक विशेषता यह है कि वे सभी लोग जो राज्य के अधिकारक्षेत्र में रहते हैं, इसके नियंत्रण में होते हैं चाहे लोग स्वेच्छा से इसके सदस्य हों या नहीं, राज्य का उन पर नियंत्रण होता है। अपने इस अधिकारक्षेत्र में राज्य सामाजिक कानून एवं व्यवस्था बनाए रखता है।

ii) राज्य का दूसरा अभिलक्षण इसकी प्रभुसत्ता (sovereignty) है जो जुड़ने के लिए सबकी समान मान्यता दर्शाती है। प्रभुसत्ता का आयाम राज्य को बल-प्रयोग का निर्णयात्मक अधिकार देता है।

iii) राज्य के पास राजनैतिक कानून का बल प्रयोगकारी ढाँचा होता है, इसीलिए, राज्य में स्थायित्व एवं चिरंतनता के गुण पाए जाते हैं।

ये विशेषताएँ केवल राज्य पर लागू होती हैं, दूसरी संस्थाओं पर नहीं। अब चूँकि राज्य एक अपने ही ढंग की संस्था है इसलिए सामाजिक समस्याओं के संबंध में इसकी भूमिका दूसरी संस्थाओं के समान नहीं है। इस अंतर के कारण ही हमने इस इकाई में पहले राज्य की भूमिका पर विचार किया, उसके बाद अन्य संस्थाओं की भूमिकाओं का उल्लेख किया है। लेकिन इस बात का ध्यान रहे कि आधुनिक राज्य और अन्य ग़ैर-राज्य संस्थाओं दोनों समाज के विनियमन और प्रबंध में समान रूप से महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

**बोध प्रश्न 1**

1) क्या राज्य दूसरी संस्थाओं के समान नहीं है?

.....

.....

.....

.....

2) राज्य और समाज में अंतर कीजिए।

.....

.....

.....

.....

## 28.3 राज्य की भूमिका

मोटे तौर पर, राज्य सामाजिक मानकों की रक्षा करता है और शोषण तथा अन्याय को रोकता है। यह सामाजिक-आर्थिक समस्याओं के निराकरण के लिए कार्य करता है और अपने सदस्यों की आम खुशहाली को बढ़ाने का प्रयास करता है। राज्य की कोई नियत भूमिका नहीं होती, बल्कि यह परिस्थितियों के अनुसार बदलती रहती है। लेनिन जैसे मार्क्सवादियों का कहना था कि राज्य केवल निजी सम्पत्ति के मालिकों का प्रतिनिधित्व करता है और इसके द्वारा वह समाज के प्रभावशाली वर्गों के हितों को प्रोत्साहित करने का साधन बन जाता है। आप चाहे इस बात से सहमत हों या न हों, लेकिन आपको मार्क्सवादियों की यह बात तो सही लगेगी कि आधुनिक समाजों में राज्य की व्यापक भूमिका है। आप शायद यह बात भी कहें कि यदि राज्य की भूमिका इतनी महत्त्वपूर्ण है तो इसका मतलब यह हुआ कि अन्य संस्थाओं को संभवत: इस क्षेत्र में आने की कोई आवश्यकता ही नहीं है। क्या ऐसा है कि राज्य अपनी भूमिका को पूरा करने में समर्थ नहीं है, इसलिए अन्य संस्थाएँ इस दायित्व के निर्वाह के लिए आ पहुँचती हैं?

भांबरी (1987 : 396) जैसे विद्वानों का मत है कि विकसित देशों में ग़ैर-राज्य संगतियों का अस्तित्व यह दर्शाता है कि आधुनिक राज्य-प्रणाली को आज अस्वीकार किया जा रहा है क्योंकि वह कालांतर में दमनात्मक और अमानवीय हो गई है। विकासशील देशों में राज्य से यह अपेक्षा की जाती है कि वह पिछड़ेपन के बोझ को हटाने में सक्रिय भूमिका अदा करेगा। ऐसा समझा जाता है कि केवल राज्य ही इस भूमिका का निर्वाह कर सकता है भांबरी (1987 : 397) के अनुसार भारत की योजना-निर्माण प्रक्रिया ने देश की कुंद अर्थव्यवस्था के मूल तत्त्वों पर कुठाराघात कर दिया है। भारत ने अपने असमर्थ और वंचित वर्ग को एक "सामाजिक स्थान" दिलाया है। भांबरी (1987 : 397) का यह भी मत है कि समाज के ग़रीब से ग़रीब वर्ग के लोगों को जो भी थोड़ी-बहुत सफलताएँ मिली हैं उनमें राज्य की भूमिका स्पष्ट दिखाई देती है। भांबरी की दृष्टि में भारत के विकास में स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका बहुत ही गौण है। भारत के विकास की समस्याओं में सरकार के कम हस्तक्षेप की जगह अधिकाधिक हस्तक्षेप की अपेक्षा है। हमने इकाई 25, 26 और 27 में भूमि, जल और वन संबंधी सरकारी नीतियों के बारे में विस्तार से चर्चा की और समय-समय पर इन संसाधनों के नियंत्रण तथा प्रबंध से संबंधित मामलों के बारे में सरकार द्वारा किए गए वैधानिक उपायों पर विचार किया था। जहाँ तक भारत का संबंध है, स्पष्टत: राज्य की भूमिका वही है जो भांबरी ने बताई है। लेकिन भारत के विकास में अन्य संस्थाओं की भूमिका को गौण ठहराने पर हमें शंका है। यहाँ प्रश्न यह नहीं है कि इन दोनों में किसकी भूमिका अधिक महत्त्वपूर्ण है। हमें इस संबंध में संतुलित दृष्टिकोण अपनाना चाहिए और दोनों के सापेक्षिक महत्त्व को समझना चाहिए। सामाजिक कल्याण में सरकारी और ग़ैर-सरकारी दोनों संस्थाओं की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। इसके अलावा, सरकारी और ग़ैर-सरकारी संस्थाएँ परिस्थितियों, मौजूदा ज़रूरतों और उनकी अपनी क्षमता की दृष्टि से अलग-अलग प्रकार की होती हैं। इस बात को इस प्रकार कहा जा सकता है कि राज्य लोगों के सामान्य कल्याण हेतु काम करता है जबकि ग़ैर-सरकारी संस्था प्राय: विशेष या क्षेत्रीय हितों पर ध्यान देती है। ये दोनों उद्देश्य एक-दूसरे के विरोधी नहीं हैं। केवल कुछ ख़ास हालात में जब स्वैच्छिक संगठन विध्वंसकारी कार्यों में संलग्न होते हैं तो इनका रवैया राज्य-विरोधी हो जाता है। इसी प्रकार, जब राज्य का रवैया दमनपूर्ण और अमानवीय हो जाता है तो ग़ैर-सरकारी संगठन उसका कार्य संभालने लगते हैं। इन संभावनाओं के होते हुए भी हमें विशेष रूप से भारतीय समाज के संदर्भ में इन दोनों की भूमिकाओं के महत्त्व को स्वीकार करना चाहिए। भारत में, वर्तमान सामाजिक शक्ति के ढाँचे को बदलने में राज्य की प्रमुख भूमिका है जबकि अन्य संगठनों का कार्य देश में शोषण और अन्याय के विरुद्ध प्रशासनिक व्यवस्था को कारगर बनाने के लिए सरकार पर दबाव डालना है।

राज्य की प्रमुख भूमिकाओं में से हम यहाँ स्वास्थ्य, आवास, व्यवसाय और मनोरंजन से संबंधित भौतिक परिस्थितियों के प्रोत्साहन और विनियमन पर विचार करेंगे। ये भूमिकाएँ प्राकृतिक संसाधनों के परिरक्षण और उपयोग से जुड़ी हैं। शहरी और ग्रामीण योजनाएँ बनाने तथा उनके सामान्य नियंत्रण के संदर्भ में हमने इस खंड की पिछली इकाइयों में राज्य की स्पष्ट भूमिका देखी। राज्य का संसाधनों पर अधिकार है। राज्य तात्कालिक लाभ के लिए इन संसाधनों को बरबाद करने वाले स्वार्थी तत्त्वों पर अंकुश रखता है। राज्य व्यापक स्तर पर निर्माण कार्य शुरू कर सकता है जिसके लाभ सभी लोग लंबे अरसे तक उठा सकते हैं। राज्य को उन प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण का प्राधिकार है जिन्हें बढ़ते हुए उद्योगवाद से ख़तरा है। यह बात अलग है कि कोई राज्य को न्यायसंगत ढंग से, पारिस्थितिक दृष्टि से सजग तरीके से प्राकृतिक संसाधनों के दोहन और प्राकृतिक संसाधनों को वैधानिक रूप से सुरक्षित रखने से रोक सके।

राज्य मानवीय क्षमताओं के साथ-साथ आर्थिक संसाधनों के संरक्षण और विकास के लिए शिक्षा तथा सांस्कृतिक जीवन को प्रोत्साहित करता है। इस प्रकार राज्य की भूमिका का और भी वर्णन किया जा सकता है क्योंकि एक सामाजिक विकास करने वाली संस्था के रूप में इसका क्षेत्र बहुत विस्तृत है। इस क्षेत्र की सीमा को केवल इसके अधिकार में जो संसाधन है उनसे ही निर्धारित किया जा सकता है। हर व्यवस्थित समाज की एक शर्त यह होती है कि इसकी सुरक्षा के लिए ऐसी शक्ति हो जो समाज द्वारा निर्धारित नियमों का उल्लंघन करने वालों को दंड दे सके। राज्य को जब इस प्रकार शक्ति का उपयोग करना पड़ता है तो इसे राज्य की नकारात्मक भूमिका कहा जा सकता है। राज्य के पास निहित शक्ति से राज्य में रहने वाला समुदाय, राज्य के कानून और व्यवस्था स्थापित करने के दायित्व को उसे सौंपना सीखता है। इसका मतलब यह है कि राज्य की भूमिका यह भी है कि वह शक्ति का उपयोग करके अपने कार्य में व्यवधान को रोके। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि राज्य को सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रकार की भूमिकाओं को निभाना पड़ता है।

समय-समय पर राज्य के व्यापक ढाँचे के अंदर अस्थायी समग्रताएँ दिखाई देती हैं। ये समग्रताएँ संस्थाओं के रूप में अलग और स्वतंत्र अस्तित्व वाली होती हैं। ये उन कार्यों को पूरा करती है जिन्हें राज्य न तो पूरा करता है और न ही कर सकता है। अब हमें इन संस्थाओं की भूमिका पर विचार करेंगे।

**सोचिए और करिए 1**

300 शब्दों की एक टिप्पणी में निरक्षता, देश में जनसंख्या में अत्यधिक वृद्धि, स्वास्थ्य का निम्न स्तर, चिकित्सा सुविधाओं की बुरी दशा और पारिस्थितिक मामलों में उपेक्षा-भाव जैसी समस्याओं के समाधान में भारत सरकार की भूमिका का वर्णन कीजिए। अपनी टिप्पणी तैयार करने के लिए दैनिक समाचार-पत्र और साप्ताहिक पत्रिकाएँ पढ़िए। इसके साथ ही अपने क्षेत्र के राजनैतिक दृष्टि से सक्रिय नेताओं का साक्षात्कार भी कीजिए।

## 28.4 ग़ैर-राज्यीय संस्थाएँ

अपने स्तर पर न तो राज्य के छोटे-छोटे भागों और न ही मात्र इसके लोगों अथवा ग़ैर-राज्य या अन्य संस्थाओं का कोई अस्तित्व है। कुछ मामलों में राज्य और अन्य संस्थाओं की भूमिकाएँ एक-दूसरे के क्षेत्र में मिल जाती हैं। उदाहरण के लिए शिक्षा के क्षेत्र में, राज्य सार्वभौम शिक्षा पर बल देता है और प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था करता है। साथ ही, हमें दिखता है कि कुछ स्वतंत्र स्वैच्छिक संस्थाएँ विविध पद्धतियों के प्रारंभिक शिक्षा प्रदान कर रही हैं। इसके अलावा, कुछ क्षेत्रों में जहाँ कई अन्य संस्थाएँ परंपरागत रूप से कार्य करती रही हैं, उन्हें राज्य को सौंप दिया गया है। उदाहरण के लिए, पहले मज़दूर संघ अपने बेरोज़गार सदस्यों को सहारा देते थे, अब कई जगह राज्य ने इस दायित्व को संभाल लिया है।

ऐसा कहा जा सकता है कि राज्य ग़रीबों के हितों की रक्षा करने के साथ सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने के लिए ज़बरदस्त भूमिका अदा करता है। इसका यह मतलब बिल्कुल नहीं है कि अन्य संगतियों की भूमिका का महत्त्व एकदम समाप्त हो गया है। सामाजिक समस्याओं के अधिकांश क्षेत्रों में अन्य संस्थाओं के प्रयासों का महत्त्व वस्तुत: घटने के बजाय और अधिक बढ़ गया है। आइए, अब हम अन्य संस्थाओं के स्वरूप के बारे में चर्चा करें।

### i) अन्य संस्थाओं का स्वरूप

राज्य के इतर संस्थाओं की पहचान उनके स्वैच्छिक स्वरूप से होती है। राजनैतिक दलों, मज़दूर संघों, व्यावसायिक निकायों जैसी स्वैच्छिक संस्थाओं की गतिविधियों में भाग लेने को समाज के सीमांत (marginalised) वर्गों और समाज की मुख्यधारा के बीच संपर्क साधने की एक कड़ी माना जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे देशों में स्वैच्छिक संगठनों को ''भागीदारी वाले लोकतंत्र'' (participatory democracy) का महत्त्वपूर्ण घटक माना जाता है। इनसे व्यक्ति या परिवार और व्यापक समाज के बीच संबंध स्थापित होता है। किसी संस्था की स्वैच्छिक प्रकृति से हमारा अभिप्राय यह होता है कि उस संस्था के सदस्य इसकी गतिविधियों में स्वैच्छा से भाग लेते हैं। लेकिन यह स्वैच्छिकता और सामाजिक-आर्थिक विकास/परिवर्तन में लोगों की भागीदारी एक ही बात नहीं है।

### ii) स्वैच्छिक प्रयास और लोगों की भागीदारी के बीच अंतर

प्राय: संस्थाएँ लोगों को अपनी समस्याओं के समाधान के लिए उनमें निहित सामर्थ्य को खोजने की प्रेरणा देती हैं। लेकिन, लोगों की भागीदारी और स्वैच्छिक प्रयास एक ही बात नहीं है। आपको ऐसे व्यक्ति मिल सकते हैं जो किसी ख़ास कार्यक्रम को पूरा करने के लिए संस्थाओं का निर्माण करते हैं। वह संस्था उस कार्यक्रम को पूरा करने के लिए अपनी योजनाएँ या कार्यनीतियाँ बना सकती है। इसे स्वैच्छिक प्रयास कहा जाएगा। लेकिन, जब इसके साथ-साथ कोई संस्था इसमें समुदाय के सदस्यों की पूर्ण रूप से भागीदारी की अपेक्षा करे तो कुछ व्यक्तियों के इस स्वैच्छिक प्रयास को सही अर्थों में लोगों की भागीदारी से होने वाला प्रयास ही कहा जाएगा। आवश्यक नहीं है कि हर स्वैच्छिक प्रयास लोगों को पूरी भागीदारी की अपेक्षा करे। पूरी भागीदारी की अपेक्षा किए बग़ैर किया जाने वाला प्रयास केवल स्वैच्छिक प्रयास की श्रेणी में रहेगा। इस महत्त्वपूर्ण अंतर को समझने के बाद हमें आशा है कि इन शब्दों का प्रयोग एक-दूसरे के लिए नहीं किया जाएगा। आइए, अब हम स्वैच्छिक निकायों की प्रमुख विशेषताओं के बारे में विचार करें।

## 28.4.1 स्वैच्छिक संगठनों के अभिलक्षण

निजी संस्थाओं का निर्माण स्वैच्छिक प्रयासों के आधार पर होता है, उन्हें सामान्यत: स्वैच्छिक संगठन कहा जाता है। संयुक्त राष्ट्र की शब्दावली में इन संगठनों को ग़ैर-सरकारी संगठनों के नाम से जाना है। संभव है कि प्राय: हममें से बहुत लोग इन दो शब्दों का प्रयोग एक-दूसरे के लिए करते रहने के आदी हैं। यह बात सही है कि स्वैच्छिक संगठन और ग़ैर-सरकारी संगठनों के बीच भिन्नताओं की चर्चा करेंगे। ये दोनों चर्चाएँ इस विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम – आर.डी.डी. 3, ग्रामीण विकास योजना और प्रबंध के खंड 3 की इकाई 1 में दी गई सामग्री पर आधारित हैं। इस विषय पर और अधिक जानकारी के लिए आप आर.डी.डी. 3 के खंड 3 में दी गई सामग्री को देखें। स्वैच्छिक संगठनों के विशिष्ट अभिलक्षण नीचे दिए गए हैं :

- स्वैच्छिक सदस्यता
- उसका उद्देश्य लाभ कमाना न हो

- इन संगठनों का निर्माण ऐसे लोगों की पहल से होता है, जो समाज के पिछड़े/दलित/निर्धन वर्ग के कल्याण के लिए सामाजिक चेतना की भावना से प्रेरित होते हैं।
- इन संगठनों के अपने नियम और विनियम होते हैं और ये सरकार के प्रशासनिक नियंत्रण से बाहर होते हैं।
- पंजीकृत स्वैच्छिक संगठन सरकारी अनुदान प्राप्त करने के हकदार होते हैं। इन्हें सरकारी अनुदान की व्यवस्थाओं के अंतर्गत निर्धारित शर्तों को भी स्वीकार करना पड़ सकता है।

प्राय: यह माना जाता है कि अधिकांश स्वैच्छिक संगठन आधारभूत सामाजिक समस्याओं से परिचित हैं, इसलिए वे लोगों के ज़्यादा नज़दीक हैं। इसके अलावा यह भी माना जाता है कि वे सरकार की नौकरशाली व्यवस्था की अपेक्षा उत्साही और समर्पित हैं। इस कारण से, यह भी समझा जाता है कि स्वैच्छिक संगठन नौकरशाही निकायों से अधिक मितव्ययी होंगे। अब आपको स्वयं यह देखना होगा कि कौन-सा स्वैच्छिक संगठन कहाँ तक इन स्वीकृत भूमिकाओं को पूरा करने के उपयुक्त है। *आइए, अब हम इस बात की परीक्षा करें कि स्वैच्छिक संगठन किन बातों में ग़ैर-सरकारी संगठनों से भिन्न हैं।*

## 28.4.2 स्वैच्छिक संगठनों और ग़ैर-सरकारी संगठनों में अंतर

क) स्वैच्छिक संगठनों का निर्माण व्यक्तियों या व्यक्तियों के समूह द्वारा किसी विशिष्ट वर्ग के लोगों के कल्याण और विकास के विशिष्ट उद्देश्य से किया जाता है। स्वैच्छिक संगठन अपने नियम और विनियम बनाते हैं। ये संगठन पंजीकृत या ग़ैर-पंजीकृत हो सकते हैं।

ग़ैर-सरकारी संगठनों का निर्माण सरकार द्वारा किसी विशिष्ट विकास संबंधी उद्देश्य से किया जाता है। ये स्वायत्त संस्थाएँ होती हैं और एक अधिनियम के अंतर्गत पंजीकृत होती हैं। ग़ैर-सरकारी संगठन सरकारी निदेशों के आधार पर बनाए गए नियमों से नियंत्रित होते हैं।

ख) स्वैच्छिक संगठनों के लिए निधियाँ दानदाताओं से प्राप्त होती हैं। ये दानदाता ग़ैर-सरकारी संगठन में से कोई संगठन भी हो सकता है। ग़ैर-सरकारी संगठनों को सरकार से धन प्राप्त होता है और वे उन्हें स्वैच्छिक संगठनों को कुछ परियोजनाओं को पूरा करने के लिए देते हैं।

ग) स्वैच्छिक संगठनों की कार्यनीतियों और नीतियों का निर्माण उनके अपने सदस्यों के द्वारा किया जाता है।

ग़ैर-सरकारी संगठन अपनी कार्यनीतियाँ और नीतियाँ सरकारी निदेशों के आधार पर बनाते हैं। उनके नीति-संबंधी मामलों को प्राय: सरकार द्वारा स्वीकृति प्रदान की जाती है। प्राय: ग़ैर-सरकारी संगठनों को अपने नीति-निर्धारण करने वाले निकायों में एक सरकारी प्रतिनिधि को शामिल करना पड़ता है।

घ) अपने आकार और क्रियाकलापों के अनुसार स्वैच्छिक संगठनों की संरचना प्राय: औपचारिक होती है।

ग़ैर-सरकारी संगठनों की संरचना आम तौर पर बड़े आकार वाली और जटिल होती है। उनमें कार्य करने के सुनिर्धारित नियम और प्रक्रियाएँ होती हैं।

ङ) स्वैच्छिक संगठनों को सामाजिक सेवा कार्यों से संबंधित आदर्शों से प्रेरणा मिलती है। उनके नेताओं में सामाजिक कार्यों के प्रति उच्च कोटि की प्रतिबद्धता का होना आवश्यक है।

ग़ैर-सरकारी संगठन अपने कार्यक्रमों के संचालन के लिए व्यावसायिक कार्मिकों को नियुक्त करते हैं। ग़ैर-सरकारी संगठनों में विशिष्ट आदर्शों के प्रति समर्पण के बजाय व्यावसायिकता का विशेष महत्त्व होता है।

च) स्वैच्छिक संगठन राजनैतिक दृष्टि से प्रेरित भी हो सकते हैं या नहीं भी हो सकते हैं। ग़ैर-सरकारी संगठन प्राय: अराजनैतिक होते हैं।

छ) स्वैच्छिक संगठन कभी-कभी समाज के सामाजिक-आर्थिक ढाँचे को बदलने या चुनौती देने के लिए उग्रवादी आंदोलनों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

ग़ैर-सरकारी संगठन प्राय: वर्तमान सामाजिक-आर्थिक संरचना के भीतर कार्य करते हैं और वे पूर्व-निर्धारित प्रतिमानों के माध्यम से परिवर्तन लाने का प्रयास करते हैं।

आइए, अब हम भारत में सामाजिक समस्याओं के संदर्भ में स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका के बारे में विचार करें।

**बोध प्रश्न 2**

1) स्वैच्छिक संगठन किन बातों में राज्य या सरकार से भिन्न होते हैं?

.....

.....

.....

.....

2) स्वैच्छिक संगठनों और ग़ैर-सरकारी संगठनों के पाँच उदाहरण दीजिए।

.....

.....

.....

.....

## 28.5 स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका

हमने ऊपर उल्लेख किया था कि स्वैच्छिक संगठन अराजनैतिक या राजनीति से प्रेरित दोनों प्रकार के हो सकते हैं। इस उपभाग में हमने मुख्य रूप से उन स्वैच्छिक संगठनों के बारे में चर्चा की है जिनका किसी दल या राज्य से संबंध नहीं है। भारत की आज़ादी से पूर्व स्वैच्छिक कार्यों के लिए किए जाने वाले प्रयास राजनैतिक दृष्टि से प्रेरित कार्य होते थे। खादी और ग्रामीण उद्योग जैसे बहुत-से अर्ध-सरकारी अभिकरण हैं जो सरकारी मार्गदर्शन के अंतर्गत कार्य करते हैं। आज भारत में बहुत बड़े स्तर पर स्वैच्छिक संगठन कार्य कर रहे हैं। इनमें से कुछ तो प्रत्यक्ष रूप सें राजनैतिक समूह हैं, जबकि कुछ अन्य संगठन सरकारी निदेशों के अंतर्गत कार्य कर रहे हैं। बाकी संगठन ग़ैर-राजनैतिक की कोटि में आते हैं।

कोठारी ने (1987 : 441) पहले दो समूहों को "अभिकरण (agency) वाले समूह" वाले समूह कहा है और अंतिम समूह को ऐसा छोटा समूह कहा जो जन-स्तर पर काम करता है। यहाँ हमने उन्हीं ग़ैर-राजनैतिक छोटे समूहों के कार्यकलापों पर अपना ध्यान केंद्रित किया है जो जन-स्तर (grassroots) पर कार्य में संलग्न हैं। सरकार विकास की प्रक्रिया में स्वैच्छिक संगठनों को शामिल करना चाहती है। यह सरकार की कार्यनीति (strategy) है कि ये संगठन राज्य के विकास कार्यक्रमों में लोगों की भागीदारी को प्रेरित करें। इस संदर्भ में, विकास और सामाजिक कार्यांतरण में स्वैच्छिक कार्य ने कई भूमिकाएँ ग्रहण कर ली हैं। आइए हम अब स्वैच्छिक संगठनों की कुछ भूमिकाओं के बारे में विचार करें।

## 28.5.1 स्वैच्छिक संगठन और पारिस्थितिकी

हमने इकाई 25, 26 और 27 में पढ़ा कि उद्योगवाद के विकास की कार्यनीति के फलस्वरूप प्रकृति और मानवों के बीच संबंधों में बदलाव आ गया है। इस परिवर्तन ने प्रकृति की प्रणालियों के अस्तित्व को ख़तरे में डाल दिया है। वनों की सुरक्षा के नाम पर जनजातीय लोग अपने परंपरागत प्राकृतिक आवास में प्रवेश से वंचित हो गए हैं। औद्योगिक भारत के मंदिरों के प्रतीक बड़े बाँधों के निर्माण की सरकारी योजनाओं के कारण लाखों लोगों को क्षतिपूर्ति के बिना ही विस्थापित होना पड़ा है। यह बात एकदम स्पष्ट है कि आधुनिक औद्योगिक प्रगति ने पारिस्थितिक संतुलन को बिगाड़ दिया है। इस संतुलन को रहन-सहन के विभिन्न सांस्कृतिक प्रतिरूपों के द्वारा लम्बे समय के दौरान विकसित किया गया था। ऐसा देखा गया है कि अधिकांश औद्योगिक सभ्यताएँ पारिस्थितिकी-विरोधी हैं। विडंबना यह है कि जन लोगों ने अपने प्राकृतिक वातावरण को पोषित करने के लिए कार्य किया, आज उन्हें ही अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए प्राकृतिक वातावरण को नष्ट करना पड़ रहा है (देखिए इकाई 27)।

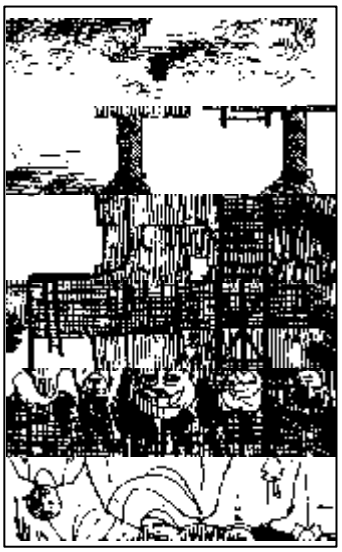

**कारख़ानों से उमड़ता प्रदूषण**

हमें प्रौद्योगिकी से प्रेरित औद्योगिक विकास के सामाजिक परिणामों को भी देखना होगा। विकासशील देशों में औद्योगिक विकास के लाभों का वितरण समान रूप से नहीं होता। विकास पर होने वाले व्यय का भार उन लोगों को उठाना पड़ता है जिन्हें उनसे लाभ नहीं मिलता। इसके परिणामस्वरूप बहुत से स्वैच्छिक संगठन तृणमूल स्तर पर बेहतर भरपाई ओर पुनर्वास कार्यक्रमों को लेकर उठ खड़े हुए हैं।

वस्तुत: विकासशील देशों में भारत में पर्यावरणीय मुद्दों में संलग्न सबसे अधिक संख्या में स्वैच्छिक संगठन हैं। उनमें से अनेक इस बातों से संबद्ध है :

i) पर्यावरण से संबंधित मामलों में जागरूकता लाना।

ii) ऐसी निजी/ सरकारी क्षेत्र की परियोजनाओं का विरोध करना, जो पर्यावरण या उन परियोजनाओं पर आश्रित लोगों के लिए हानिकर हों।

iii) वनों की कटाई, चरागाहों के क्षेत्रों में कमी होने, बंजर भूमि में वृद्धि, रेगिस्तान बनने आदि की पर्यावरण संबंधी समस्याओं का समाधान करना।

जो संगठन उपरोक्त मद (i) पर कार्य कर रहे हैं उनके नाम हैं – विज्ञान और पर्यावरण केंद्र (सेंटर फॉर साइंस एंड एनवायरनमेंट), कल्पवृक्ष, दिल्ली विज्ञान फोरम, लोकायन, बंबई प्राकृतिक इतिहास समिति (बॉम्बे नेचुरल हिस्ट्री सोसाइटी)। मद (ii) से संबंधित संगठन सारे

देश में फैले हुए हैं। ये संगठन सरकार की वनों और बंजर भूमि संबंधी वर्तमान नीतियों, बड़ बाँधों, परमाणवीय केंद्रों, मिसाइल (missile) परीक्षा स्थलों का विरोध करते हैं। उपयुक्त प्रौद्योगिकी समूह (Appropriate Technology Group) लखनऊ; ऐस्ट्रा, बंगलौर; एम.सी.आर. सी., मद्रास; डी.जी.एम.एस., चमोली आदि संस्थाएँ ऐसी प्रौद्योगिकी इस्तेमाल कर रही हैं जो पर्यावरण की दृष्टि से अनुकूल और पारिस्थितिक दशष्टि से हितकारी हैं। इन्हें ऊपर सूचीबद्ध विषयों की मद (iii) से संबंधित समूह में वर्गीकृत किया जा सकता है। केरल शास्त्र साहित्य परिषद् एक ऐसे समूह का उदाहरण है जो ऊपर वर्णित लगभग तीनों ही विषयों से संबंधित है।

उल्लिखित सुपरिचित समूहों के अलावा बहुत से अन्य छोटे-छोटे समूह भी हैं जो शीघ्र विलुप्त होने वाले प्राणियों को बचाने, पुराने स्मारकों के परिरक्षण, उपयोगी वृक्षों को लगाने और पुराने तालाबों तथा बाँधों की मरम्मत आदि के कार्यों में संलग्न हैं।

पर्यावरण संबंधी मामलों की ओर ध्यान दिलाने वाले स्वैच्छिक कार्य में संलग्न समूह कई तरह की कार्यनीतियों (strategies) का इस्तेमाल करते हैं। इनमें प्रचार माध्यमों, विरोध सभाओं, न्यायालयों में याचिका देकर और व्यापक नेटवर्क तैयार करके पर्यावरण संबंधी मामलों की ओर ध्यान आकृष्ट किया जाता है। इन्हीं कार्यनीतियों के कारण सरकार को 1982 में प्रस्तावित वन नीति के कार्यान्वयन को रोकना पड़ा। इस संदर्भ में नर्मदा घाटी परियोजना, टिहरी बाँध, मुन्ना बाँध, इंजमपल्ली बाँध या कोइलकारो बाँध के निर्माण से संबंधित जन-स्तरीय विवाद स्वैच्छिक प्रयास के कई उदाहरण हैं। इन प्रयासों का उद्देश्य विकास को ऐसी दिशा प्रदान करना है जिसमें जन-हित हो और पर्यावरण से अनुकूलता हो। चमोली में डी.जी.एस.एम. के प्रयासों से संचालित मिश्रित जाति के पेड़ों के रोपण की योजना का स्थान लोगों की भागीदारी से संचालित योजना ले सकती है। इस वर्णन से आप यह न समझ लें कि पर्यावरण परिरक्षण के लिए कार्यरत स्वैच्छिक समूहों में सब कुछ ठीक-ठाक चल रहा है। सभी स्वैच्छिक समूहों की तरह इन्हें भी बहुत-सी समस्याओं का सामना करना पड़ता है, इनकी चर्चा हमने इकाई के भाग 28.6 में की है। आइए, अब हम अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लोगों को जिन सामाजिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है, उनके संदर्भ में स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका पर विचार करें।

### 28.5.2 अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के विकास के लिए स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका

इस पाठ्यक्रम के खंड 6 में आपने पढ़ा ही है कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लोगों को अवसरों से वंचित रहने के कारण किन समस्याओं का सामना करना पड़ता है। प्रसाद (1987 : 588-612) ने यह दिखाने का प्रयास किया है कि अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के बीच काम करने वाले इन स्वैच्छिक समूहों में ईसाई मिशनरियाँ भी शामिल हैं। इन्होंने शिक्षा, स्वास्थ्य और मानव अधिकारों के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया है। उदाहरण के तौर पर, अमेरिकन मिशनरियों ने सन् 1830 में ही नागालैंड में कई स्कूल खोल दिए थे। बिहार के छोटानागपुर क्षेत्र में लूथर खोले। उन्होंने ईसाई और ग़ैर-ईसाई लोगों के लाभ के लिए दवाखाने खोले (देखिए विद्यार्थी 1977 : 40)। बाद में रोमन कैथोलिक मिशनरियों ने भी छोटानागपुर क्षेत्र में अपना कार्य शुरू किया।

मिशनरियों ने आरंभ में लोगों को ईसाई बनाने का प्रयास किया। वे अपने इन प्रयासों में सफल नहीं हुए। इसलिए उन्होंने जनजातीय लोगों को आकर्षित करने के लिए भूमि की पट्टेदारी और खेती में काम करने की दिशा जैसे ग़ैर-धार्मिक कार्यों में लोगों की सहायता शुरू की। वे उनके मामलों को लेकर अदालत में लड़े और उन्होंने उन्हें जिताया भी। इससे छोटानागपुर के जनजातीय लोगों के मन में मिशनरियों के प्रति विश्वास पैदा हो गया। रॉय (1931) के अनुसार

मिशनरियों ने जनजातीयों के लोगों को महाजनों के शिकंजे से भी बचाया। इसके अलावा, 1909 में फ़ादर हॉफमैन नामक कैथोलिक मिशनरी ने एक सहकारी समिति संगठित की। इस समिति के नेटवर्क ने पूरे छोटानागपुर क्षेत्र में ईसाई मिशनरियों को मजबूत आधार आधार प्रदान किया। मध्य प्रदेश, उड़ीसा, आंध्र प्रदेश और बिहार के जनजातीय क्षेत्रों में मिशनरियों ने जनजातीय लोगों की शिक्षा और स्वास्थ्य में सुधार के लिए बहुत काम किया।

1921 में स्वाधीनता आंदोलन के दौरान गाँधीवादी ठक्कर बापा ने पंचमहल जिले के मीराखेड़ी नामक स्थान पर आश्रम स्थापित किया। उन्होंने गुजरात में दोहद स्थान पर भील सेवा मंडल नामक एक अन्य संगठन भी स्थापित किया। केवल ये दो ही संगठन नहीं, ठक्कर बापा ने भारत के विभिन्न भागों में ऐसी 21 संस्थाएं स्थापित कीं। ढेबर (1961 : 303) ने ''**ए रोमान्स ऑफ सोशल वर्क इन इंडिया**'' नामक पुस्तक में सामाजिक सेवा के क्षेत्र में ठक्कर बापा की भूमिका के इतिहास का निरूपण किया है। ठक्कर बापा के इन संगठनों ने शिक्षा और जन-स्वास्थ्य के क्षेत्र में सराहनीय कार्य किया। इसके पश्चात् सेवा केंद्र द्वारा बिहार में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की सामाजिक-आर्थिक समस्याओं के समाधान के लिए प्रयास शुरू किए गए। अखिल भारतीय कांग्रेस के 1939 के अधिवेशन में महात्मा गाँधी, जवाहरलाल नेहरू और पटेल जैसे राष्ट्रीय नेताओं ने भारतीय समाज के आदिम जातियों और पिछड़े वर्गों के कल्याण के लिए कार्य करने का संकल्प किया। राजेन्द्र प्रसाद और उनके साथी श्री नारायण जी ने भी सेवा केंद्र में लोगों को पढ़ना-लिखने के लिए प्रोत्साहित किया।

मध्य प्रदेश में 1945-46 में मंडला के निकट महाराजपुर नामक स्थान पर एक अन्य स्वैच्छिक संगठन, **वनवासी सेवा मंडल**, की स्थापना की गई। इसने जनजातियों में शिक्षा के प्रसार के लिए काम किया। इसने एक कृषि फार्म का प्रबंध, तीन सहकारी समितियों, एक चल दवाखाना और पंचायती राज के प्रशिक्षण के लिए एक शिक्षण केंद्र भी संचालित किये।

इस तरह उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दियों में स्वैच्छिक प्रयासों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की। यह प्रयास मुख्य रूप से धर्म के क्षेत्र में हुए थे, परंतु लोगों को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए धर्म से बाहर अन्य क्षेत्रों में भी प्रयास हुए। हरिजन सेवक संघ, नई तालीम संघ और लेपर सोसाइटी (कोढ़ी समाज) आदि स्वैच्छिक संगठनों ने मानवतावादी परंपरा का प्रतिनिधित्व किया है (प्रसाद 1987 : 593)।

सन् 1947 के बाद सरकारी समर्थन से भारत में स्वैच्छिक प्रयासों को और अधिक प्रोत्साहन मिला। सरकार ने स्वैच्छिक अधिकरणों (agencies) के साथ मिलकर पिछड़े समुदायों की सामाजिक-आर्थिक समस्याओं के समाधान का प्रयास किया। जनजातीय क्षेत्रों में कई संगठन आगे आए। इन संस्थाओं को सरकार और जनता से वित्तीय समर्थन प्राप्त हुआ। उदाहरण के लिए, सन् 1948 में जनजातीय समुदायों को भारत की सामाजिक-आर्थिक विकास की मुख्य धारा में लाने के लिए भारतीय आदिम जाति सेवक संघ की स्थापना की गई। इन संस्था से संबंधित कई संस्था से संबंधित कई संस्थाएं भारतभर में थीं। इसने जनजातीय कल्याण के लिए सरकार द्वारा नीति निर्माण में महत्त्वपूर्ण योगदान किया।

इसके अलावा, रामकृष्ण मिशन, दी सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी, सेवा संघ, गाँधी स्मारक निधि, कस्तूरबा स्मारक निधि, भारत लोक कला मंदिर आदि संगठनों ने भारत के जन-जीवन पर उल्लेखनीय प्रभाव डाला है। इन संगठनों ने भारत के जन-जीवन पर उल्लेखनीय प्रभाव डाला है। इन संस्थाओं द्वारा संचलित शिक्षा संस्थाएं और चिकित्सा संस्थानों द्वारा शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में सुप्रशिक्षित कार्मिकों को तैयार करने की महत्त्वपूर्ण भूमिका से सभी अच्छी तरह परिचित हैं।

अधिकांश स्वैच्छिक संगठनों ने ''भागीदारी के लोकतंत्र'' की संकल्पना के समर्थन में योगदान किया है। वे सरकारी क्षेत्र के बहुत-से विकासात्मक कार्यों को स्वैच्छिक क्षेत्र में ले जा रहे हैं।

यथा संभव वे योजना निर्माण, उसके कार्यान्वयन और विकासात्मक परियोजनाओं के मूल्यांकन में सफल भूमिका अदा करते हैं। यह अनुभव किया गया है कि स्वैच्छिक संगठन अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के विकास के विभिन्न क्षेत्रों में और अधिक महत्त्वपूर्ण योगदान कर सकते हैं। उदाहरण के तौर पर, जैसा कि प्रसाद (1987 : 607) का सुझाव है कि जनजातियों के पट्टे की भूमि को सही-सही रिकॉर्ड करने का काम स्वैच्छिक संगठन भली-भाँति कर सकते हैं। वे बिहार और मध्य प्रदेश के जनजातीय क्षेत्रों में बंधुआ मज़दूरी के स्वरूप और उससे प्रभावित लोगों की संख्या की सही-सही जानकारी एकत्र कर सकते हैं। स्वैच्छिक संगठनों द्वारा आदिम जातीय समूहों के पारिस्थितिक अध्ययन से हमें उनके सामाजिक संगठन और अपने भौतिक पर्यावरण से उनके संबधों का पता चलेगा। वे जनजातीय स्त्रियों पर बहुत कम अध्ययन हुए हैं। जनजातीय स्त्रियों को विकासात्मक प्रयासों से अभी तक कोई लाभ नहीं हुआ है। इस क्षेत्र में स्वैच्छिक प्रयासों से काफ़ी लाभ हो सकता है।

अभी तक पिछले दो भागों में हमने पारिस्थितिक आंदोलनों और अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के विकास में स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका के बारे में विचार किया। आइए, अब हम इन स्वैच्छिक संगठनों को किस प्रकार की समस्याओं से जूझना पड़ता है इस विषय पर विचार करें।

**सोचिए और करिए 2**

अपनी पसंद के एक स्वैच्छिक संगठन को चुनिए और उनके कार्यकलापों की जानकारी प्राप्त कीजिए। उसके उद्देश्यों और कार्य-पद्धति के बारे में 250 शब्दों की एक टिप्पणी लिखिए।

## 28.6 स्वैच्छिक संगठनों के सामने आने वाली समस्याएँ

हमने पाया है कि भारत में स्वैच्छिक प्रयासों का प्रतिनिधित्व कई प्रकार के समूहों और व्यक्तियों के द्वारा किया जाता है। स्वैच्छिक क्षेत्र की विशेषता इन संगठनों के आकार, विचारधारा, रुचि, क्रियाकलाप के केंद्र और उनके प्रभाव के द्वारा स्पष्ट होती है। कई स्वैच्छिक संगठन यदा-कदा और रुक-रुककर कार्य करते हैं। इससे इन संगठनों में समुचित योजना के अभाव आग्र गलत ढंग से सोचे हुए कार्यक्रमों का पता चलता है। जैसे ही इनमें थोड़ी-बहुत तेज़ी आती है और कार्यक्रम कुछ आगे बढ़ता है, इनमें अचानक निष्क्रियता के कारण दीर्घकालिक रुकावट आ जाती है। प्राय:, स्वैच्छिक प्रयास तभी तक सक्रिय रहते हैं जब तक उन्हें बाहरी सहायता मिलती रहती है। जैसे ही बाहरी वित्तीय या संगठनात्मक अथवा प्रेरणात्मक समर्थन वापस ले लिया जाता है, ये प्रयास रुक जाते हैं। ऐसा क्यों होता है?

भारत में स्वैच्छिक कार्य के बारे में उल्लेखनीय बात यह है कि प्राय: ऐसे सभी कार्य किसी भी क्षेत्र में बाहर के क्षेत्र के लोगों के द्वारा शुरू किए जाते हैं जिन्हें शीघ्र ही या कुछ समय के पश्चात् वहाँ से जाना पड़ जाता है। आम तौर पर, जैसे ही बाहरी व्यक्ति वहाँ से चले जाते हैं, तो विकास संबंधी प्रयास लड़खड़ा कर समाप्त हो जाते हैं। वही पुराना ढाँचा फिर सामने आ जाता है और यथापूर्व स्थिति बन जाती है। इससे बचने का एक ही तरीका है कि वह स्वैच्छिकता जन-स्तर से आरंभ हो। ऐसे प्रयासों का नेतृत्व बाहर से न आकर उसी समूह में से उभर कर सामने आना चाहिए। इस प्रमुख समस्या के अलावा स्वैच्छिक कार्य के मार्ग में आने वाले अन्य कारण नीचे दिए गए हैं।

i) अधिकांश स्वैच्छिक संगठन अपने निकटवर्ती और अप्रत्यक्षत: अधिक सम्पन्न लोगों के बीच कार्य करके खुश हो जाते हैं। ऐसे स्थानों पर उन्हें अच्छे परिणमा आसानी से मिल जाते हैं। वे महा ग़रीबी वाले क्षेत्रों में कार्य करने की चुनौती को स्वीकार नहीं करते।

ii) अधिकांश स्वैच्छिक समूहों के पास आय के स्वतंत्र स्रोत का अभाव होता है। उन्हें बाहरी वित्तीय स्रोत पर निर्भर करना पड़ता है। वित्तीय निधियों के अभाव और अनिश्चितता के कारण बहुत से स्वैच्छिक प्रयासों को बीच में ही बंद कर देना पड़ता है। जब स्वैच्छिक कार्यों के लिए सरकार से धन प्राप्त होता है तो सरकारी नौकरशाही व्यवस्था के दीर्घकालीन विलंब और उबाऊ प्रक्रिया के कारण उनकी परियोजना के कार्य को सुचारु रूप से चलाना कठिन हो जाता है। यहाँ तक कि बहुत-सी योजनाबद्ध ढंग से चलाई जाने वाली परियोजनाओं पर भी कार्यान्वयन के स्तर पर विलंब का बुरा प्रभाव पड़ता है।

आज भारत में विदेशी अभिकरणों से ग़ैर-सरकारी संगठनों को बहुत बड़ी मात्रा में धनराशि दान के रूप में प्राप्त हो रही है। ऐसी संस्थाओं को, विदेशी अभिकरणों से धन प्राप्त करने के लिए, स्वयं को गृह मंत्रालय में पंजीकृत कराना पड़ता है। माहेश्वरी (1987 : 506) के अनुसार 1984 में भारत की स्वैच्छिक संस्थाओं को 254 करोड़ रुपये की राशि योगदान के रूप में मिली, जो 1986 में बढ़कर 350 करोड़ रुपये हो गई। इसमें प्रमुख योगदान संयुक्त राज्य अमेरिका, पश्चिम जर्मनी, ग्रेट ब्रिटेन स्विटज़रलैंड, कनाडा, हॉलैंड और इटली का था। भारत में इन विदेशी निधियों को पाने वाले प्रमुख राज्य थे तमिलनाडु, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, केरल, पश्चिम बंगाल, कर्नाटक, बिहार और उत्तर प्रदेश। यदि इन निधियों के दुरुपयोग की बात प्रमाणित हो जाए तो गृह मंत्रालय गलत उपयोग करने वाले अभिकरणों का पंजीकरण निरस्त कर सकता है। उदाहरण के लिए, 1986 में नियमों का उल्लंघन करने के कारण 27 स्वैच्छिक समूहों का पंजीकरण निरस्त कर दिया गया था। ऐसा माना जाता है कि प्राय: विदेशी पैसे का उपयोग प्रच्छन्न रूप से जासूसी या धर्मांतरण जैसे क्रियाकलापों के लिए किया जाता है। ऐसी स्थिति में स्वैच्छिक संगठनों के सामने वास्तव में बड़ी दुविधा की स्थिति होती है कि विदेशी पैसे को स्वीकार करें या न करें।

iii) आजकल स्वैच्छिक कार्यों की पहल हमेशा उत्प्रेरित व्यक्तियों द्वारा नहीं होती। इसने अब व्यावसायिकता का रूप ग्रहण कर लिया है। इन क्रियाकलापों के केंद्र, व्यक्तियों के बजाय समुदाय हो गए हैं और वे अपने यहाँ कार्य करने वालों से यह अपेक्षा रखते हैं कि उनमें प्रशिक्षित कर्मिकों के विभिन्न कौशल हों। ये पेशेवर विशेषज्ञ, जिन्हें पर्याप्त प्रशिक्षण मिला होता है, अपने कौशल के बदले में ऊँचे वेतन की आशा करते हैं। सभी संगठन ऐसे विशेषज्ञों को रखने की स्थिति में नहीं होते। इस प्रकार स्वैच्छिक क्षेत्र में एक विशिष्ट प्रकार के रोज़गार के प्रतिरूप के उभरकर आने के कारण बहुत से युवा लोग स्वैच्छिक समूहों में केवल इसलिए नौकरी करते हैं ताकि उन्हें आगे बढ़ने के अवसर मिल सके। इनमें से कुछ लोगों को तो किसी विशिष्ट परियोजना की मूलभूत आवश्यकताओं का भी पता नहीं होता।

iv) माहेश्वरी (1987 : 567) ने यह भी संकेत किया है कि प्राय: इन स्वैच्छिक संगठनों को सरकारी प्रशासन परेशान करता है। केवल इन संगठनों द्वारा बनाया गया एकत्रित मंच ही सरकारी नौकरशाही व्यवस्था को और अधिक जिम्मेदारी से व्यवहार करने को बाधित कर सकता है। कुछ क्षेत्रों में स्थानीय ज़मींदार, राज्य स्तर के विधानसभा सदस्य और अन्य शक्तिसम्पन्न वर्ग इन स्वैच्छिक अभिकरणों को धमकाने की कोशिश करते हैं क्योंकि ये अधिकरण जीवन के सभी क्षेत्रों में उनके अन्यायसंगत आधिपत्य को चुनौती दे रहे होते हैं। ऐसी परिस्थितियों में, कोई अकेली स्वैच्छिक संस्था मुश्किल से ही टिक सकती है जबकि स्वैच्छिक संस्थाओं का संघ अपने सदस्य संगठनों के सफलतापूर्वक पैर जमाने में सहायक हो सकता है।

v) पर्यावरण संबंधी आंदोलनों में स्वैच्छिक संस्थाओं के सामने प्राय: यह समस्या होती है कि उनके पास विशेषज्ञों और पर्यावरण संबंधी समस्याओं की विशिष्ट जानकारी का अभाव

होता है। पर्यावरण संबंधी संतुलन की समस्या के प्रति सजगता बिल्कुल हाल ही में सामने आई है। वनों के क्षेत्र में कमी होना, मृदा अपरदन और प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक उपभोग जैसी पारिस्थितिक आपदाओं के संबंध में व्यवस्थित अभिलेखबद्ध आँकड़ों के अभाव के कारण सरकार की तथाकथित विकास परियोजनाओं के विरोध में स्वैच्छिक समूहों द्वारा दिए गए तर्क प्राय: प्रभावहीन हो जाते हैं। सामान्यत:, स्वैच्छिक समूहों के पास सीमित बजट होता है इसलिए वे कोई सर्वेक्षण और पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभाव का विश्लेषण नहीं कर सकते। उदाहरण के लिए, भोपाल गैस आपदा से संबंधित कार्यों से जुड़े स्वैच्छिक समूहों के रिसाव के कारण पानी, पौधों, खाद्यान्न आदि पर हुए गैस के प्रभाव के आकलन करने के लिए इनके नमूनों का परीक्षण तक नहीं करा सके।

स्वैच्छिक समूहों के छोटे आकार के कारण उनकी बात पर कोई ध्यान नहीं देता। उदाहरण के तौर पर, नर्मदा बाँध के निर्माण के विरोध में आंदोलन करने वाले समूह पिछले दस साल से सक्रिय हैं। सरकार उनके नेताओं को गिरफ़्तार करके कुछ दिन बाद छोड़ देती है और अधिकारी वर्ग उनके आंदोलन को गंभीरता से नहीं लेता। कुछ समूहों के विरोध प्रयासों को देशविरोधी समझा जाता है और उसे कानून और व्यवस्था के लिए ख़तरा माना जाता है और उसे कानून और व्यवस्था के लिए ख़तरा माना जाता है। सरकार उनके विरुद्ध दंडात्मक कार्रवाई करती है।

vi) स्वैच्छिक समूहों द्वारा किए जाने वाले विरोध-प्रदर्शन और सार्वजनिक हित में की गई न्याय-याचिका (देखें शब्दावली) का भी कोई विशेष असर नहीं होता। इससे पता चलता है जन-हित के अत्यधिक महत्त्वपूर्ण मामलों के संबंध में भी स्वैच्छिक कार्योंह का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। उदाहरण के लिए, भारत सरकार ने टिहरी बाँध के निर्माण कार्य को उस समय भी अनुमति दे दी जबकि उच्चतम न्यायालय में इसके निर्माण कार्य को उस समय भी अनुमति दे दी जबकि उच्चतम न्यायालय में इसके निर्माण के विरोध में एक मामला सुनवाई के लिए दर्ज था। स्वैच्छिक संगठनों द्वारा उठाए गए मामलों पर जन-साधारण में कोई चर्चा नहीं होती। ऐसी कई संस्थाएँ सरकार द्वारा संचालित विकास परियोजनाओं के कारण विस्थापित हुए लोगों के पुनर्वास के लिए प्रयास कर रही है। सिंगरौली क्षेत्र से 1,50,000 लोगों के विस्थापित होने के बाद किसी भी प्रकार की सार्वजनिक चर्चा नहीं हुई, यद्यपि इस क्षेत्र में कई स्वैच्छिक संगठन कार्यरत हैं (देखिए जैन, 1993)।

vii) प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग से संबंधित राजनीति को चलाने वाले बहुत सशक्त स्वार्थी लोग हैं। इस शक्ति के खेल में स्वैच्छिक क्षेत्र की बात कौन सुनता है? पर्यावरणवादी यह समझाने की कोशिश करते हैं कि प्राकृतिक संसाधनों से संबंधित मामले केवल न्यायसंगत वितरण से ही नहीं जुड़े हैं। वे मूलत: मानव के अस्तित्व और प्रकृति को हम किस रूप में समझते हैं, इससे संबंधित मामले हैं। उपयोगोन्मुख संस्कृति के प्रचलन से पैदा अंधी दौड़ में कोई भी पर्यावरणवादियों की बात सुनने को तैयार नहीं। इससे स्वैच्छिक समूह ऐसी स्थिति में पहुँच जाते हैं, जहाँ उनके लिए कुछ कर पाना संभव नहीं होता। इसका स्वाभाविक परिणाम यह होता है कि उन्हें लोगों को और नीति-निर्माताओं को इसकी संवदेनशीलता का परिचय कराने तथा विकासात्मक परियोजनाओं के नकारात्मक प्रभाव का ज्ञान कराने मात्र से संतोष करना पड़ता है। इससे अधिक की वे अपेक्षा नहीं कर सकते। वे विकास परियोजनाओं से संबंधित सरकारी नीतियों को बदलवा पाने की भी आशा नहीं कर सकते।

स्वैच्छिक क्षेत्र को जिन समस्याओं का सामना करना पड़ता है, उनकी संख्या बहुत अधिक है और उनपर पार पाना काफी कठिन है। प्रश्न यह है कि ऐसी स्थिति में इस विषय में क्या करना संभव है? अगले भाग में हमने ऐसी कुछ कार्यनीतियों की चर्चा की है, जिनका उपयोग करके स्वैच्छिक संस्थाएँ अधिक प्रभावशाली ढंग से कार्य कर सकती हैं।

**बोध प्रश्न 3**

1) क्या आपकी राय में, किसी स्वैच्छिक संगठन को विदेशी अभिकरणों से दान के रूप में निधियाँ प्राप्त करनी चाहिए? अपने उत्तर के समर्थन में कारण दीजिए।

.....

.....

.....

.....

2) क्या अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सामाजिक-आर्थिक पिछड़ेपन की समस्याओं के समाधान के लिए सरकार पहले भी कोई महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर चुकी है? अपने उत्तर के पक्ष में कारण लिखिए।

.....

.....

.....

.....

## 28.7 स्वैच्छिक प्रयासों को बढ़ावा देने के लिए सुझाव

अभी तक हमने स्वैच्छिक संगठनों की सामाजिक-आर्थिक समस्याओं के क्षेत्र की भूमिकाओं पर अपना ध्यान केंद्रित किया था। भारत में स्वैच्छिक क्षेत्र को जिन समस्याओं को सामना करना पड़ता है हमने उन पर ध्यान दिया। पिछले भाग में हमने स्वैच्छिक संस्थाओं के एक एकत्रित मंत्र की आवश्यकता की चर्चा की थी। वास्तव में, कर्नाटक, तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश जैसे राज्यों में अभिकरणों ने एक संघ बनाया है। इससे उसमें एकत्व की भावना पैदा होगी और उन्हें साथ मिलकर राजनैतिक दृष्टि से अपना प्रभाव जमाने का अवसर मिलेगा। आइए, अब हम देखते हैं कि किस प्रकार से ऐसे प्रयासों को बल मिल सकता है।

### i) संस्कृति और सामुदायिक अभिविन्यास

चिपको आंदोलन (देखिए जैन, 1984) में लोगों की भागीदारी ने यह बात सिद्ध कर दी कि किसी आंदोलन को स्थिर आधार प्रदान करने के लिए यह आवश्यक है कि वह जन-स्तर से शुरू हो। एक बड़े संगठनात्मक ढाँचे तथा उच्च-स्तरीय नेतृत्व के अभाव में भी इस आंदोलन ने वनों के संरक्षण और स्थानीय लोगों को सामुदायिक संसाधनों पर नियंत्रण देने के उद्देश्यों को सफलतापूर्वक प्राप्त किया। इस क्षेत्र के जनसाधारण ने बाहरी लोगों को यह बात बखूबी समझा दी कि वन ऐसे संसाधन नहीं हैं जिनका वाणिज्यिक रूप में दोहन किया जा सकता है। वन लोगों को जीवन, आजीविका, जल और स्वास्थ्यदायक हवा देते हैं। हिमालय क्षेत्र के लोगों को विश्व के प्रति इस अंतर्दृष्टि ने उन्हें ऐसी शक्ति दी कि वे उन बाहरी लोगों से लड़ सके जिन्होंने उनके क्षेत्र की संस्कृति को नष्ट किया। चिपको आंदोलन अब मुख्यधारा में होने वाली चर्चाओं से परे का विषय बन गया है। यह इस क्षेत्र की सांस्कृतिक परंपरा को दृढ़ता से जीवन प्रदान कर रहा है और आज भी यह वनरोपण के महत्त्वाकांक्षी कार्यक्रमों को हाथ में लिए हुए है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि ऊपर जिन समस्याओं का हमने उल्लेख किया, उनका समाधान निकालने का यह एक तरीका है।

### ii) लाभ पाने वालों के संगठन

ऐसी परंपरा रही है कि स्वैच्छिक संगठन अपने क्रियाकलापों के लिए कोई एक इलाका चुन लेते हैं। संभवत: अब समय आ गया है जब स्वैच्छिकता का उद्‌भव स्वयं उन समूहों से होना चाहिए जिन समूहों के लोग कल्याण कार्यों का लाभ उठाना चाहते हैं और इसके लिए उन्हें संगठित होना चाहिए। उन्हें राजनैतिक मंच पर अपनी आवाज उठानी चाहिए। उन्हें सुविधाएँ और दूसरे लाभ पाने के लिए प्रशासन पर दबाव डालना चाहिए। उदाहरण के तौर पर बहुत से राज्यों में कृषि संबंधी कानून केवल दिखावा बनकर रह गए। छोटे और सीमांत कृषकों को अपने आपको संगठित करके कृषि संबंधी कानूनों को प्रभावी ढंग से लागू करने की माँग करनी चाहिए।

### iii) अंतर्निहित और सतत मूल्यांकन

ऐसे स्वैच्छिक समूह जिनकी न केवल समाज के अभावग्रस्त लोगों की सामाजिक-आर्थिक स्थितियों के सुधार में रुचि है बल्कि जिनकी इस कार्य में संलग्न वर्गों की कार्य-पद्धति में भी रुचि है, उन्हें अपनी परियोजनाओं के मूल्यांकन के लिए परियोजना में अंतर्निहित और निरंतर चलने वाली प्रक्रिया की भी आवश्यकता है। परियोजनाओं के समयबद्ध और पूर्ण मूल्यांकन से उन्हें एक निश्चित अवधि में अपनी उपलब्धियों का संचित आकलन करने का अवसर मिल सकता है। परियोजना और उसकी सफलता के बारे में निर्णय करने का अधिकार स्वयं लोगों को है। मूल्यांकन के संबंध में किए जाने वाले सभी कार्यों से समस्या-प्रधान क्षेत्र के बारे में जानकारी मिलती है और इससे ऐसी परियोजनाओं में लगे सभी लोगों को अपने कार्य-निष्पादन में सुधार की आवश्यकता का ज्ञान होता है। सुधरी आर्थिक स्थिति, सुधरे हुए स्वास्थ्य के मूल्यांकन के लिए कुछ तकनीकें उपलब्ध हैं, स्वैच्छिक संस्थाओं को अपने कार्य-निष्पादन की जाँच के लिए इन तकनीकों का उपयोग करना चाहिए। हमें लोगों की भागीदारी और निर्णय करने के लिए लोकतंत्रीय प्रक्रिया जैसी अमूर्त बातों के मूल्यांकन के लिए नई पद्धतियों का विकास करना होगा ताकि लोगों में ऐसे विषयों के प्रति जागरूकता पैदा हो।

इसके अलावा, स्वैच्छिक अभिकरणों के लिए यह बात भी महत्त्वपूर्ण है कि उन्हें विभिन्न विषयों के गुणात्मक एवं मात्रात्मक विश्लेषण में संतुलन बनाए रखना चाहिए। यदि कोई स्वैच्छिक समूह भौतिक विकास पर कार्य कर रहा हो तो मात्रात्मक विश्लेषण अधिक उपयोगी होगा। इसी तरह जब लोगों के विकास और उनके संगठन पर ध्यान केंद्रित करना हो तो उस स्वैच्छिक कार्य में लगे समूह को गुणात्मक विश्लेषण करना चाहिए। चूँकि लोगों का भौतिक विकास और उनकी अपने अधिकारों तथा उनके अनुरूप कर्तव्यों के प्रति सचेतता का विकास साथ-साथ होता है। इसलिए यह उचित है कि गुणात्मक और मात्रात्मक दोनों प्रकार के विश्लेषणों पर पर्याप्त ध्यान दिया जाए। अभावग्रस्त वर्गों को प्राप्त होने वाले प्रत्येक भौतिक लाभ के साथ-साथ उनमें उस लाभ से मिलने वाले परिणामों को स्वीकार करके शक्तिमान बनने की क्षमता भी होनी चाहिए। प्राय: स्वैच्छिक संगठन एक पहलू पर ध्यान केंद्रित करके दूसरे पहलू को नज़रअंदाज कर देते हैं। लेकिन, अंतत: अधिक प्रभावशाली होने के लिए यह आवश्यक है कि लाभ पाने वाला वर्ग आर्थिक विकास के लाभों के साथ उनके अनुरूप संगठनात्मक अधिकार से मिलने वाले लाभों को मिलाकर संतुलित दृष्टिकोण अपनाए।

**सोचिए और करिए 3**

कल्पना कीजिए कि आप एक ऐसी पर्यावरण संस्था बनाने की योजना बना रहे हैं जो कूड़े-कचरे को फिर से इस्तेमाल करने का कार्य करेगी। आपके विचार में पहले-पहल किस प्रकार का कूड़ा-कचरा इकट्‌ठा करना चाहिए? यदि आपके तीन तरह के कूड़े-कचरे वाली सामग्री का फिर से इस्तेमाल करना हो तो प्राथमिकता का आपका क्रम क्या होगा? अपनी योजनाओं पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखें।

## 28.8 सारांश

इस इकाई के शुरुआत हमने राज्य को एक संस्था के रूप में मानते हुए की। राज्य की परिभाषा एक विशेष प्रकार की संस्था के रूप में की। इसकी अपनी कुछ ऐसी विशेषताएँ हैं, जो इसे दूसरी संगतियों से अलग करती हैं। इसके बाद हमने राज्य की अपने क्षेत्र में कानून और व्यवस्था बनाए रखने तथा उस क्षेत्र में रहने वाले लोगों के सामान्य कल्याण हेतु कार्य करने की भूमिका का वर्णन किया। फिर हमने ग़ैर-सरकारी और अन्य संगठनों के स्वरूप तथा भूमिका की परीक्षा की और स्वैच्छिक संगठनों एवं ग़ैर-सरकारी संगठनों के बीच अंतर को स्पष्ट किया। स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका को स्पष्ट करने के लिए हमने पारिस्थितिक आंदोलनों और अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजातियों के विकास के इन दो क्षेत्रों को चुना। उसके बाद स्वैच्छिक संस्थाओं के सामने जो समस्याएँ आती हैं उनमें से कुछ के बारे में चर्चा की। अंत में, भारत में स्वैच्छिक प्रयासों को प्रोत्साहित करने के लिए कुछ सुझाव दिए गए।

## 28.9 शब्दावली

**पारिस्थितिकी (Ecology)** : विज्ञान की वह शाखा जिसमें प्राणी मात्र तथा उनके पर्यावरण के बीच अंतर्संबंधों का अध्ययन किया जाता है।

**प्रभुसत्ता (Sovereignty)** : यह अवधारणा इस इकाई मे एक स्वायत्त राज्य के लिए प्रयुक्त की गई है। ऐसा राज्य जो बाह्य नियंत्रण से मुक्त हो।

**भागीदारी वाला प्रजातंत्र (Participatory Democracy)** : ऐसी सरकार जिसमें चरम शक्ति जनसत्ता के हाथ में हो तथा जिसमें सरकार के कार्यकलापों में जनसाधारण का सक्रिय योग हो।

**संस्था (Association)** : समान हित के लिए जुड़ने वाले लोगों का संघ।

**सार्वजनिक हित में की गई न्याय याचिका (Public Interest Litigation)** : वंचित वर्गों और सामाजिक शोषण से त्रस्त लोगों को कानूनी की सुविधा प्राप्त हो सके, इसके लिए स्वैच्छिक संगठनों द्वारा किये गए उपायों को सार्वजनिक हित में की गई न्याययाचिका को (PIL) कहते हैं।

**संकल्पवाद (Voluntarism)** : उन व्यक्तियों की मंशाएँ या प्रेरणाएँ जिनको माना जाता है कि वे स्वेच्छा से कार्य करते हैं, न कि जो उसके अनुसार जो सामाजिक ढाँचा निर्धारित करता है।

## 28.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

**बोध प्रश्न 1**

1) राज्य का स्वरूप अन्य संस्थाओं के समान नहीं होता। यह अपने आप में एक अलग कोटि है। इसका कारण यह है कि राज्य की अपनी कुछ विशेषताएँ होती हैं, संस्थाओं की नहीं होतीं। ये विशेषताएँ हैं : (क) क्षेत्र, (ख) प्रभुसत्ता, (ग) बल-प्रयोग की शक्ति।

2) समाज में राज्य होता है, इसलिए राज्य समाज की अपेक्षा छोटी इकाई है। दूसरी ओर, आपको ऐसा राज्य भी मिल सकता है जिसके क्षेत्र में कई समाज हों। समाज ऐसी अवधारणा है जिसमें एक ओर व्यक्तियों के बीच और दूसरी ओर व्यक्तियों तथा समूहों के बीच परस्पर विभिन्न वर्गों के बीच संबंधों की शृंखला होती है। इस अर्थ में, राज्य की अवधारणा का तात्पर्य केवल एक विशिष्ट प्रकार के संबंध से है न कि संबंधों की शृंखला से। स्पष्ट है कि राज्य तथा समाज अलग-अलग अवधारणाएँ हैं।

**बोध प्रश्न 2**

1) स्वैच्छिक संगठनों का निर्माण उनके सदस्यों की स्वतंत्र इच्छा से होता है। किंतु जहाँ तक, राज्य का संबंध है, इसमें रहने वाले सभी लोगों को, वे चाहें या न चाहें, राज्य का सदस्य होना पड़ता है। दूसरे, स्वैच्छिक संगठनों का अस्तित्व राज्य के दायरे में होता है और वे इसके विरुद्ध कार्य नहीं कर सकते। राज्य अपने क्षेत्र में कानून और व्यवस्था कायम रखने के लिए जिम्मेदार होता है और वह राज्य के लोगों के सामान्य कल्याण के लिए कार्यरत रहता है। स्वैच्छिक संगठन सामान्यतः, समाज के विशिष्ट वर्गों के विशिष्ट हितों के लिए कार्य करते हैं।

2)

| **स्वैच्छिक संगठन** | **ग़ैर-सरकारी संगठन** |
|---|---|
| 1) विज्ञान और पर्यावरण केंद्र | 1) जन-कार्य और ग्रामीण प्रौद्योगिकी विकास परिषद् (कापार्ट) |
| 2) कल्पवृक्ष | 2) राष्ट्रीय बंजर भूमि बोर्ड |
| 3) दिल्ली विज्ञान फोरम | 3) केंद्रीय समाज कल्याण बोर्ड |
| 4) लोकायन | 4) नाबार्ड |
| 5) बंबई प्राकृतिक इतिहास समिति | 5) खादी ग्रामोद्योग आयोग |

**बोध प्रश्न 3**

1) जो स्वैच्छिक संगठन विदेशी सहायता देने वालों से पैसे की माँग करते हैं या योगदान की अपेक्षा रखते हैं, उनके अपने पास निजी आय के कई साधन नहीं होते। ऐसी संस्थाएँ पैसे की राष्ट्रीय या अंतरराष्ट्रीय सहायता पर निर्भर करती हैं। विभिन्न मुद्दों के, विशेष रूप से पारिस्थितिक मामलों के सार्विकीकरण के कारण पारिस्थितिक दृष्टि से अधिक संतुलित विश्व के निर्माण के लिए हमारे लिए अपने संसाधनों और प्रयासों को इकट्ठा करके चलना अधिक अच्छा होगा।

2) राज्य से यह अपेक्षा करना कि वह समाज के किसी समूह की सभी समस्याओं का समाधान कर सकेगा, न तो यह उचित है और न ही यह राज्य के लिए संभव ही है कि वह समाज के किसी वर्ग की सभी समस्याओं का समाधान कर सके। इस दृष्टि से, यह नहीं कहा जा सकता है कि राज्य ने अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की समस्याओं का पहले ही समाधान कर लिया है। हमारे सामने इतनी अधिक समस्याएँ हैं कि राज्य और स्वैच्छिक संस्थाओं दोनों के प्रयास से मिलकर ही समाधान संभव होगा।

# संदर्भ ग्रंथ सूची


अग्रवाल, अनिल (1985) *ग्रेजिंग लैड्स : पीपल एण्ड एनवायरनमेंट द स्टेट ऑफ इंडियाज एनवायरमेंट 1984-85 दी सैकंड सिटीजन्स रिपोर्ट में,* सेंटर फॉर साइंस एण्ड एनवायरनमेंट: नई दिल्ली, पृष्ठ 3-15; पृष्ठ 157-162

अग्रवाल, अनिल, डैरिल डी मॉन्ट और उज्ज्वल समर्थ (1987) द *फाइट फॉर सरवाइवल : पीपल्स एक्शन फॉर एनवायरनमेंट*, सेंटर फॉर साइंस एण्ड एनवायरनमेंट : नई दिल्ली

अग्रवाल, अनिल और सुनीता नारायण (1985) *वूमैन एण्ड नैचुरल रिसोर्सेज़ सोशल एक्शन 35* (नंबर 4 अक्टूबर-दिसंबर), पृष्ठ 301-325

_____, (1989) *ग्रीनिंग इंडियाज़ विलेज़ेज : स्ट्रैटर्जी फॉर एनवायरनमेंटली साउंड पार्टीसिपेटरी रूरल डेवलपमेंट सेंटर फॉर साइंस एण्ड एनवायरनमेंट* : नई दिल्ली

अग्रवाल, पी.सी., *वेरिएबिलिटी एण्ड ट्रैड्स ऑफ एनुअल रैनफाल इन दी छत्तीसगढ़ रीजन,* मध्य प्रदेश, प्रोसिडिंग्स ऑफ दी सिम्पोजियम ऑन टॉपिकल मानसून्स, पॉवर : भारत प्रौद्योगिकी संस्थान्

अली, अलमास, (1980) *हैल्थ एण्ड न्यूट्रिशिनल स्टेटस ऑफ पौड़ी भूमियाँ ऑफ जलधि विलेज इन सुंदरगढ़ डिस्ट्रिक्ट, उड़ीसा,* द न्यूज़लैटर (जनजातीय विकास प्रभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार), 13 (एन-1), पृष्ठ 115-130

बालगोपाल, के. (1988) *प्रोबिंग्स इन द पॉलीटिकल इकनॉमी ऑफ़ अग्रेरियन क्लासेज़ एण्ड कॉनफ्लिक्ट्स,* पर्सपेक्टिव्स : हैदराबाद

बनर्जी, सुमंत, (1980), इन दे वेक ऑफ़ *नक्सलबाड़ी,* सुबर्णरेखा : कलकत्ता।

बनर्जी, तरुण कुमार (1980) *गिरिजन मूवमेंट इन श्रीकाकुलम* – 1967-70, सोसाइटी एण्ड चेंज, 1(4), अक्तूबर-दिसंबर

भांबरी, सी.पी. (1987) द *मॉडर्न स्टेट एण्ड वालैंटरी सोसाइटीज़, दी इंडियन जर्नल ऑफ़ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन,* xxxiii (3) : 395-398

भाटिया, बेला (1988) *ऑफिशियल ड्रॉउट रिलीफ मैज़र्स : ए केस स्टडी ऑफ़ गुजरात,* सोशल एक्शन, 38 (एन-2, अप्रैल-जून), पृष्ठ 138-161

बिश्वास, बी.सी. (1980) *इफैक्ट ऑफ़ फॉरेस्ट कवर ऑन रेल्फान डिस्ट्रिब्यूशन इन अंडमान एण्ड निकोबार आइलैंड्स,* मौसम, नंबर 1, जनवरी

चतुर्वेदी , एम.सी. और पीटर रॉजर्स (1985) *वाटर रिसोर्सेज सिस्टम्स प्लानिंग : सम केस स्टडीज़ फॉर इंडिया,* इंडियन ऐकेडमी ऑफ़ साइंस : बंगलौर

सी.पी.आर. (1985) *पीपल्स पार्टीसिपेशन एज़ ए की टु हिमालयन ईको-सिस्टम डेवलपमेंट,* सेंटर फॉर पॉलिसी रिसर्च : नई दिल्ली

सी.एस.ई. (1985) द *स्टेट ऑफ़ इंडियाज़ एनवायरनमेंट, 1984-85 : दी सैकंड सिटीजन्स रिपोर्ट,* सेंटर फॉर साइंस एंड एनवायरनमेंट : नई दिल्ली

सी.डब्ल्यू.सी. (1990) *डाइरेक्टरी ऑफ़ लार्ज डैम्स इन इंडिया* : केंद्रीय जल आयोग : नई दिल्ली

दांडेकर, वी.एम. और खुदानपुर, जी. जे. (1957) *वर्किंग ऑफ़ बॉम्बे टिनैंसी एक्ट, 1948, रिपोर्ट ऑफ़ इनवेस्टीगेशन,* महाराष्ट्र सरकार : बंबई

देसाई, ए.आर., (1979) (संपा.), *पैजेंट स्ट्रगल्स इन इंडिया*, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस : दिल्ली

धनागरे, डी.एन. (1976) *पैज़ेंट प्रोटैस्ट एंड पॉलिटिक्स – द तेभागा मूवमेंट इन बेंगाल (इंडिया)* 1946-47, द जर्नल ऑफ़ पैजेंट स्टडीज़, 8(3), अप्रैल

_____, (1983) पैज़ेंट *मूवमेंट्स इन इंडिया* 1920-50, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस : दिल्ली

ढेबर, यू.एन., (1961) रिपोर्ट ऑफ़ द शेड्यूल्ड कास्ट्स एंड शेड्यूल्ड ट्राइब्स कमीशन, गवर्नमेंट ऑफ इंडिया प्रेस : नई दिल्ली

फर्नान्डेस, वॉल्टर, (1986) *कंस्ट्रक्शन वर्कर्स*, पॉवरलैसनैस एंड बौंडेज : द केस ऑफ़ द एशियन गेम्स, सोशल एक्शन, 36 (एन. 3, जुलाई-सितम्बर), पृष्ठ 264-291

_____, (1987) *ड्रॉउट इन इंडिया : इट्स कॉसेज़ एंड विक्टिम्स*, सोशल एक्शन 37 (एन. 4, अक्तूबर-दिसंबर), पृष्ठ 421-443

_____, (1988) द *ड्राफ्ट फोरेस्ट पॉलिसी* 1987 एंड द नेशनल वाटर पॉलिसी 1987, सोशल एक्सन, वॉल्यूम 38, नंबर 1, जनवरी-मार्च, पृष्ठ 84-94

_____, और एनाक्षी गांगुली ठुकराल (संपा.) (1989) *डेवलपमेंट, डिस्प्लेसमेंट एंड दि-हैब्लीटेशन : इशूज़ फॉर ए नेशनल डिबेट*, इंडियन सोशल इंस्टीट्यूट : नई दिल्ली

_____, और गीता मेनन, (1987) *ट्राइबल वूमैन एंड फॉरेस्ट इकोनॉमी : डिफॉरेस्टेशन, एक्सप्लॉयटेशन एंड स्टेटस चेंज*, इंडियन सोशल इंस्टीट्यूट : नई दिल्ली

_____, गीता मेनन और फ़िलिप विगस, (1988) *फॉरेस्टस, एनवायरनमेंट एंड ट्राइबल इकोनॉमी : डिफॉरेस्टेशन, इम्पावरिशमेंट एंड मार्जिनलाइजेशन इन उड़ीसा*, इंडियन सोशल इंस्टीट्यूट : नई दिल्ली

_____, और कुलकर्णी, एस., (1983) *टूवर्ड्स् ए न्यू फॉरेस्ट पॉलिसी*, इंडियन सोशल इंस्टीट्यूट : नई दिल्ली

गाडगिल, माधव, (1983) फॉरेस्ट्री विद ए सोशल पर्पज़ इन वॉल्टर फर्नान्डेस एंड शरद कुलकर्णी (संपा.) *टूवर्ड्स ए न्यू फॉरेस्ट पॉलिसी : पीपल्स राइट्स एंड एनवायरनमेंटल नीड*, इंडियन सोशल इंस्टीट्यूट : नई दिल्ली, पृष्ठ 111-133

_____, (1989) *डिफॉरेस्ट्टेशन : प्रॉब्लम्स एंड प्रॉस्पैक्ट्स, सोसाइटी फॉर प्रोमोशन* ऑफ़ वेस्टलैंड डेवलपमेंट : नई दिल्ली

गफ़, कैथलीन, (1974) *इंडियन पैज़ेंट अपराइजिंग, इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल विकली*, 9(32-34), स्पेशल नंबर, अगस्त

गौडा, के. और श्रीधर, एम.वी., (1987) अर्बन *फॉरेस्ट्री एंड इम्पैक्ट ऑन एनवायरनमेंट : ए स्टडी ऑफ़ मैसूर सिटी, प्रमोद सिंह* (संपा.) इकोलॉजी अर्बन इंडिया, वॉल्यूम-II, आशीष पब्लिशिंग हाउस : नई दिल्ली

गुहा, रणजीत, (1983) द *प्रोज़ ऑफ़ काउंटर-इनसर्जंसी''*, रणजीत गुहा द्वारा संपादित सबऑल्टर्न स्टडीज़-II, ऑक्सफोर्ड प्रेस : नई दिल्ली

गुप्ता, आर., प्रवा बनर्जी और अमर गुलरिया, (1981) *ट्राइबल अनरेस्ट एंड फॉरेस्ट मैनेजमेंट इन बिहार*, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ़ मैनेजमेंट : अहमदाबाद

हर्डग्रेव, रॉबर्ट, जूनियर, (1977) द *मॉपिला रिबिलियन 1921 : पैज़ेंट रिवोल्ट इन मालाबार*, मॉडर्न एशियन स्टडीज़, 2 (1)

_____, (1981) *पैज़ेंट नेशनलिस्ट्स ऑफ़ गुजरात,* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस : नई दिल्ली

हैनिंघम, स्टीफ़न, (1982) *पैज़ेंट मूवमेंट्स इन कोलॉनिअल इंडिया, नॉर्थ बिहार 1917-1942,* ऑस्ट्रलियन नेशनल एशियन यूनिवर्सिटी : कैनबरा

जैन, शाभिता, (1984) *स्टैंडिंग अप फॉर ट्रिज,* यूनासिल्वा, 36(4) : 12-20

_____, (1988) *केस स्टडीज़ ऑफ़ फार्म फॉरेस्ट्री एण्ड वेस्टलैंड डेवलपमेंट इन गुजरात, इंडिया,* एफ.ए.ओ. : बैंककॉक

_____, (1993) *हैबीटट, ह्यूमन डिस्प्लेसमेंट एण्ड डेवलपमेंट कॉस्ट : ए केस-स्टडी,* रेलेवंट सोशियोलॉजी, अक्टूबर/नवम्बर अंक

जोधा, एन.एस. (1990) रूरल *कॉमन प्रॉपर्टी रिसोर्सेज़ : कॉन्ट्रीब्यूशन्स एंड क्राइसिज़* (16 मई, 1992 को स्थापना दिवस के अवसर पर दिया गया भाषण), सोसाइटी फॉर प्रमोशन ऑफ़ वेस्टलैंड्स डेवलपमेंट : नई दिल्ली

जोशी, गोपा, (1983) *फॉरेस्ट्स एंड फॉरेस्ट पॉलिसी इन इंडिया,* सोशल साइंटिस्ट, 11(1) : 43 : 52

कालिता, एस. और एस. के. शर्मा, (1981) *सेमिनार ऑन द स्टेट्स ऑफ़ एनवायरनमेंटल स्टडीज़ इन इंडिया* पर त्रिवेन्द्रम में हुए सेमिनार में प्रस्तुत लेख ''ए प्रॉबेबल इफैक्ट ऑफ़ डिफॉरेस्ट्टेशन ऑन द रेनफ़ाल क्लाइमेटॉलॉजी इन द अर्स्टब्हाइल लखीमपुर डिस्ट्रिक्ट ऑफ़ असम''

खुसरो, ए. एम., (1958) *इकोनॉमी एंड सोशल इफ़ैक्ट ऑफ़ जागीरदारी एबॉलिशन एंड लैंड रिफॉर्म इन हैदराबाद,* उस्मानिया विश्वविद्यालय प्रेस : हैदराबाद

कोठारी, आर., (1987) *वॉलेंटरी ऑर्गेनाइजेशन इन ए प्लूरल सोसाइटी, द इंडियन जर्नल ऑफ़ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन,* xxxiii(3) : 115-128

मूर, बैरिंग्टन, जूनियर, (1967) *सोशल ओरिजिन्स ऑफ़ डिक्टैटरशिप एंड डेमोक्रेसी,* एलन लेन : लंदन

मुखर्जी, मृदुला, (1979) *पैज़ेंट मूवमेंट इन पटियाला स्टेट 1937-48, स्टडीज़ इन हिस्ट्री,* 1(2), जुलाई-दिसम्बर

मुरिश्वर, जॉय और वाल्टर फ़नन्डिस, (1988) *मार्जिनलाइज़ेशन, कोपिंग मेकेनिज़्म एंड लौंग-टर्म सोल्यूशन्स ऑन ड्रॉउट,* सोशल एक्शन, वॉल्यूम 38, नंबर 2, अप्रैल-जून, पृष्ठ 162-178

नाग, बी.एस. और कठपालिया, जी.एन., (1975) *वाटर रिर्सोस ऑफ़ इंडिया, इन वाटर एंड ह्यमैन नीड्स,* जल संसाधनों पर हुए द्वितीय विश्व सम्मेलन के कार्यवृत्त, वॉल्यूम 2, सीबीआईपी : नई दिल्ली

नम्बूदिरिपाद, ई.एम.एस., (1943) *एक शॉर्ट हिस्ट्री ऑफ़ द पैजैंट मूवमेंट इन केरल,* पीपल्स पब्लिशिंग हाउस : बंबई

एन.सी.ए., (1976) नेशनल कमीशन ऑन एग्रीकल्चर वॉल्यूम 9 और 15, भारत सरकार सिंचाई मंत्रालय, नई दिल्ली

एन.सी.एच.एस.ई. (1986) *रिहैब्लीटेशन ऑफ़ डिस्प्लेस्ड पर्सन्स ड्यू टॅ कंस्ट्रक्शन ऑफ़ मेजर डैम्स, वॉल्यूम* I नेशनल सेंटर फॉर ह्यूमैन सेटेलमेंट्स एंड एनवायरनमेंट : नई दिल्ली

पणिक्कर, के.एन., (1979) ''पैजेंट, रिवोल्ट्स इन मालाबार इन द नानटिंथ एंड ट्ब्टिंयथ सेंचरीज़'' *इन पैज़ेंट स्ट्रगल्स इन इंडिया,* ए.आर., देसाई द्वारा संपादित, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस : दिल्ली

प्रसाद, गुरु, (1986) द ग्रेट स्ट्रगल, इन एग्रेरियन स्ट्रगल्स इन इंडिया आफ्टर इंडीपेंडेंस, ए. आर. देसाई द्वारा संपादित, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस : नई दिल्ली

राव, वी.एम., (1992) लैंड रिफॉर्म एक्सपीरियेंसस : पर्सपेक्टिव फॉर स्ट्रेटजी इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, xxi/11 (26) : ए 30 से ए 64 तक

रॉय, एस.सी., (1931) द इफैक्ट्स ऑन द एबोरिजिनिस ऑफ़ छोटानागपुर एंड देयर कॉन्ट्रेक्टस विद वेस्टर्न सिविलाइज़ेशन, जर्नल ऑफ़ बिहार एंड रिसर्च सोसाइटी, 17(iv)

रॉय, एस.के., (1983) सोशल फॉरेस्ट्री, फॉर वूम? सामाजिक वानिकी पर हुई कार्यशाला में प्रस्तुत लेख, जुलाई 5-6, इंडियन एनवायरनमेंट सोसाइटी : नई दिल्ली

सेंट, किशोर, (1988) ड्रॉउट्स इन द अरावलीज़, सोशल एक्शन, वॉल्यूम 38, नंबर 2, अप्रैल-जून पृष्ठ 129-137

सेनगुप्ता, निर्मल, (1991) मैनेजिंग कॉन प्रॉपर्टी : इरिगेशन सिस्टम्स इन इंडिया इंड द फिलिपीन्स, सेज : नई दिल्ली

शाह, घनश्याम, (1990) सोशल मूवमेंट्स इन इंडिया : ए रिव्यू ऑफ़ द लिट्रेचर, सेज पब्लिकेशन्स : नई दिल्ली

सिद्दीकी, एम.एचत्र (1978) *एग्रेरियन अन्रैस्ट इन नॉर्थ इंडिया : द यूनाइटेड प्रोविसेज*, विकास पब्लिसिंग हाउस : नई दिल्ली

सिंह प्रमोद, (1987) *इकोलॉजी ऑफ़ अरबेन इंडिया, वॉल्यूम-II*, आशीष पब्लिकशंग हाउस : नई दिल्ली

सिंह, शेखर, आशीष कोठारी और कुलन अमीन (1992) इवेल्यूएटिंग मेजर इरिगेशन प्रोजेक्ट्स इन इंडिया, एनाक्षी गांगुली ठुकराल (संपा.) बिग डैक्स, डिस्प्लेस्ट पीपल्स : रिवर्स ऑफ़ सौरो, रिवर्स ऑफ़ चेंज, सेज पब्लिकेशन्स 1992, पृष्ठ 169-186 में

सिंहरॉय, डी.के., (1992) वूमैन इन पैज़ेंट मूवमेंट्स : तेभागा, नेक्सलाइट एंड आफ्टर मनोहर: नई दिल्ली

सुराणा, पुष्पेन्द्र, (1979) पैज़ेंट मूवमेंट स्टडीज़ : ए सोशोलॉजीकल एनालिन्सीस, इमर्जिंग साशोलॉजी, 1(1), जनवरी

_____, (1983) *सोशल मूवमेंटल एंड सोशल स्ट्रक्चर*, मनोहर : दिल्ली

विद्यार्थी, एल.पी., (1977) *द पैजेंट ऑर्गेनाइजेशन इन इंडिया,* सामाजिक और सांस्कृतिक अनुसंधान परिषद् : रांची।

चतुर्वेदी, टी.एन. (संपादक) (1987) स्पेशल नंबर ऑन वॉलंटरी ऑर्गनाइजेशन्स एंड डवलपमेंट, देयर रोल एंड फंक्शन्स (स्वैच्छिक संगठन और विकास के संबंध में विशेष अंक : इनकी भूमिका और कार्य।) *दी इंडियन जर्नल ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन,* 33 (3)

फ्रंडा, एम. (1983) *वालण्टरी एसोसिएशन्स एंड लोकल डवलपमेंट इन इंडिया,* यंग एशिया पब्लिकेशन्स : नई दिल्ली